

भगवान महावीर स्वामी और उनके सार्वकालिक एवं सार्वभौमिक सिद्धान्त

मानवीय संवेदनाओं और मूल्यों के साथ-साथ जीवमात्र के प्रति अहिंसात्मक दृष्टिकोण को प्रकट करने वाले, क्रियान्वयन करने वाले एवं भारतीय संस्कृति को विश्व पटल पर एक श्रेष्ठ , सभ्य और अहिंसात्मक प्रणाली की परम्परा के सूत्रपात में पिरोते हुये विश्व के प्रत्येक जीव के जीवन को दिग्दर्शित और प्रभावित किया है। जिनका जीवन इतना पवित्र और पुनीत है कि उनके जन्म लेने के छह माह पूर्व से ही देवों के द्वारा रत्नों की वृष्टि प्रारंभ हो जाती है , जन्म के समय नरक से अनंत दुःखों के स्थान पर भी पल भर के लिये शांति हो जाती है , यहाँ तक कि जिन माता-पिता ने उनको जन्म दिया है, वे भी इतने पवित्र और पुनीत हो जाते हैं कि जन्म-मरण के दुःखों से निवृत्ति का मार्ग स्वयमेव सिद्ध हो जाता है। एक आदर्श पुरुष के रूप में उन्होंने भारतीय संस्कृति और विश्व को जो भी दिया है , उसका एक अंश भी यदि क्रियान्वयन में बना रहेगा तो निश्चित ही मानवीय संवेदनायें तार-तार नहीं होगी।

भगवान महावीर स्वामी का जन्म ईसा पूर्व ५९९ वैशाली गणतंत्र के क्षत्रिय कुण्डलपुर में पिता सिद्धार्थ और माता त्रिशला के यहाँ चैत्र शुक्ल त्रयोदश के दिन हुआ था। जिनका जन्म नाम वद्धमान रखा गया। वीर , अतिवीर, सन्मति, महावीर और वद्धमान ये पाँच नामों से भी भगवान महावीरस्वामी को जाना जाता है। प्रत्येक नामकरण की पृथक्-पृथक् प्रेरणीय संस्मरण प्रसंग है। भगवान महावीर स्वामी ने ७२ वर्ष की अवस्था में ईसापूर्व ५२७ में पावापुरी बिहार में कार्तिक कृष्ण अमावस्या को निर्वाण प्राप्त किया। निर्वाण के उपलक्ष्य में दीपावली पर्व का आयोजन सम्पूर्ण विश्व में किया जाता है। भगवान महावीर स्वामी ने वे ही विचार और सिद्धान्त प्रस्फुटित किये हैं , जो पूर्व में तीर्थंकर भगवान ने कहे हैं। परन्तु भगवान महावीर इस चौबीसे के अन्तिम तीर्थंकर हैं , वे शासननायक हैं, उनके जीवन के प्रसंग प्रेरणीय , अनुशरणीय और उत्साहित करने वाले हैं , इसलिये हम भगवान महावीर के सिद्धान्तों की बात प्राथमिकता से करते हैं। भगवान महावीर स्वामी ने पंचशील के सिद्धान्त दिये। जो आज वर्तमान में राष्ट्र और समाज की भयाभय और चारित्रिक पतन की स्थिति बनी हुई है , उसमें अमृत की बूँदों की तरह उनके वे पंचशील के सिद्धान्त हैं - अहिंसा , सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य और अरिग्रह। ये पाँच पंचशील हैं। इनके अलावा मैत्री , प्रमोद, कारुण्य, अनेकान्त, स्याद्वाद, क्षमा, स्वाधीनता का अधिकार, सैद्धान्तिक दृढ़ता, विचारों की परिपक्वता आदि विषयों पर उनके सैद्धान्तिक बिन्दु वर्तमान की विषम परिस्थितियों को सम करने में महत्त्वपूर्ण योगदान करने वाले हैं। आवश्यकता है मात्र इनके परिपालन की।

भगवान के रूप में जैनधर्म ने महावीर स्वामी को स्वीकार किया है। चौबीसवें तीर्थंकर महावीर स्वामी जिन्होंने एक आदर्श पुरुष की भूमिका का निर्वहन करके प्रत्येक जीव को स्वतंत्र जीने के लिये सूत्रों का शंखनाद किया है। जिनके सूत्र प्रत्येक मानवीय जीवन के लिये तो श्रेष्ठ ही है , साथ-साथ जिनके जीवन पतित है , अधो है , अविकसित है उनको वे प्रेरणात्मक सिद्धान्त बनकर उनके जीवन को परिवर्तित करने लिये उद्यत होते हैं। भगवान महावीर स्वामी के सिद्धान्त सार्वकालिक है , सार्वभौमिक है जिनके विवेचन के माध्यम से सुस्पष्ट होगा कि मानव जीवन के लिये उनकी प्रासंगिकता कितनी अधिक प्रभावशाली है।

१. जिओ और जीने दो - भगवान महावीर स्वामी का व्यक्तिवाद , राष्ट्रवाद, समाजवाद आदि इनसे परे जीववाद पर उनको दृष्टिकोण पहुँचा। उन्होंने प्रत्येक जीव की रक्षा और सुरक्षा की बात कही है। हम किसी के जीवन को न नष्ट करें और न ही उससे होने वाली अशांति को जीवन में प्रवेश करने दें। किसी के अधिकारों को न छीने , किसी भी मिथ्या आरोप-प्रत्यारोप न लगाये , न्याय-नीति पूर्वक आजीविका स्वयं प्राप्त करें और अन्य को प्रेरणायें दें। प्रत्येक जीव का अपना जीवन है , यदि हम उसकी सुरक्षा नहीं कर सकते हैं तो उसको दुःखी करना , मारना या सताना भी हमारा उत्तरदायित्व नहीं है। क्योंकि किसी के अधिकारों को नहीं दबाना ही जीवन की श्रेष्ठता है। हम किसी की रक्षा न कर पाये, तो कोई बात नहीं पर किसी को सताये न।

आज वर्तमान की परिस्थिति में इस सिद्धान्त की महती आवश्यकता है। आज विश्व में फैले आतंकवाद, निराशा, जीवों की हिंसा , आत्मिक पतन , चारित्रिक पतन , बेरोजगारी, जीवन का हित सिद्ध न होने पर आत्महत्या करना , अहंकार, पदों की लोपलुता , रिश्तखोरी, कालाबाजारी, शासकीय सम्पत्ति को नुकसान पहुँचाना , दूसरे की निंदा और स्वयं की प्रशंसा में चित्त को लगाये रखना, योग्य व्यक्तित्व की अवहेलना आदि ऐसी अनेक विषमतायें समाज में पैदा हो गई हैं , जिन कारणों से एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति का शत्रु बन गया है। कोई प्रत्यक्ष शत्रु है तो कोई परोक्ष शत्रु है। हम प्रयास करें कि इस सिद्धान्त को अपनाये और स्वयं के जीवन को भी श्रेष्ठ बनाये एवं अन्य को भी प्रेरणायें दें।

२. परिस्थिति बदले पर सिद्धान्त नहीं - भगवान महावीर स्वामी ने जीवन के प्रत्येक पल में सावधानी रखी। एक सूक्ष्म से सूक्ष्म जीव का भी घात उन्होंने नहीं होने दिया। परिस्थितियाँ बदली पर सिद्धान्तों से कभी समझौता नहीं किया। महलों से जंगलों में आ गये , परन्तु आलस्य नहीं किया , हिंसा नहीं होने दी। सदा अहिंसात्मक मार्ग पर स्वयं के कदम आरूढ़ किये।

आज जीवन की इस आपाधापी में परिस्थितियाँ बदलते ही हमारे नियम और सिद्धान्त तुरंत बदल जाते हैं। नियम ही हमारे जीवन के आधार होते हैं , उनके बिना जीवन को व्यवस्थित नहीं किया जा सकता है। जिस व्यक्ति के जीवन में भगवान की आराधना करना , सात्त्विक प्रवृत्ति और चारित्रिक

क्रिया में दृढ़तम लगन है, वह किसी भी परिस्थिति में विचलित नहीं होगा और न होना चाहिये क्योंकि विपरीत परिस्थिति सदा हमारी दृढ़ता की परीक्षा लेती है।

3. अहिंसा - किसी को मारना नहीं, सताना नहीं, किसी के जीवन का घात नहीं करना, अपने निजी हितों के लिये दूसरे के हितों को दोहन नहीं करना, अपने अधिकारों का दुरुपयोग करके किसी को सताना नहीं, शासन के नियमों का उल्लंघन करके स्वयं के हितों के साधनों में नहीं लगना, जिन कारणों से व्यर्थ में हिंसा होती हो उनसे बचना, जैसे - व्यर्थ में पानी बर्बाद करने से, व्यर्थ में फूल पत्तियाँ तोड़ने से, व्यर्थ में पंखा-कूलर, लाइट खुली छोड़ने से, व्यर्थ में आग जलाने से आदि इन सबसे बचना ही अहिंसा है। अहिंसा हमारे दैनिक जीवन को बहुत सुदृढ़ और उन्नतिशील बनाती है। जब प्रातःकाल घरों में पानी को छाना जाता है तो उसका उद्देश्य एक ओर जहाँ अहिंसापद्धति का प्रयोग है वहीं दूसरी ओर हमारे स्वास्थ्य को मजबूत बनाये रखने का महत्वपूर्ण उपाय है। शुद्ध सात्विक भोजन करके के लिये हम बाजार से लायी हुयी सब्जियों को साफ करते हैं, धोते हैं फिर बनाते हैं, जिसका उद्देश्य मात्र इतना ही कि यदि इसमें कोई जीव लिपटा हो या लगा हो तो वह दूर हो जाये, और शुद्ध सब्जी को खा सके। एक कार्य करने में दो कार्य हो रहे हैं।

हमने प्रायः विद्यालयों में देखा होगा, कि कक्षासंचालन के दौरान जब शिक्षक पढ़ाते हैं तो आमतौर पर कोई न कोई विद्यार्थी चटकनी वाले पेन को बार-बार चट-चट करता है, तो शिक्षक कहता है कि व्यर्थ में क्यों चट-चट कर रहे हो? बस यही बात भगवान महावीर स्वामी का कहना है कि व्यर्थ में क्यों हिंसा कर रहे हो? जिसका प्रयोजन नहीं फिर हिंसा क्यों किये जा रहे हो? जैनदर्शन ने अहिंसा को परिभाषित करने के लिये एक बहुत ही श्रेष्ठ सूत्र आचार्य अमितगति महाराज ने पुरुषार्थसिद्धि उपाय में कहा है -

अप्रादुर्भावः खलु रागादीनां भवत्यहिंसेति।

तेषामेवोत्पत्तिर्हिंसेति जिनागमस्य संक्षेपः॥

एक ओर जहाँ किसी को मारना, सताना हिंसा है। वहीं दूसरी ओर जैनाचार्य कहते हैं कि राग अर्थात् प्रेम की उत्पत्ति भी हिंसा है। जहाँ प्रेम होगा वहीं द्वेष होगा। जहाँ अपनापन होगा वहीं परायापन होगा। कभी पराये, पराये नहीं बनते हैं। अपने ही पराये बनते हैं। दुश्मनों से दुश्मनी नहीं होती है, दोस्तों से दुश्मनी होती है। अर्थात् जहाँ राग की उत्पत्ति होगी वहाँ हिंसा होगी। इसलिये जनसामान्य में भी कहा जाता है- किसी के साथ कम से कम अपेक्षाएँ रखना चाहिये, क्योंकि ज्यादा अपेक्षा व्यक्ति को निराश करती है। अपेक्षाएँ जितनी कम होगी, उतना कम राग होगा, उतना कम प्रेम होगा और उतनी ही कम हिंसा होगी।

४. मित्ती मे सव्व भूएसु (सब प्राणियों से मेरी मैत्री है) - जीवनमूल्यों के प्रति गहन चिन्तन और जीवमात्र के प्रति परम मैत्री का भाव भगवान महावीर स्वामी के जीवनदर्शन से सुस्पष्ट होता रहा है। जिन्होंने प्रत्येक जीव के साथ मैत्री , प्रमोद, वात्सल्य और स्नेहयुक्त जीवन की परिकल्पना का शंखनाद अपने जीवन के आचरण और विचारों से किया है। इसी विषय को आचार्य अमितगतिस्वामी ने अपने सामायिक पाठ में लिखा है -

**सत्त्वेषु मैत्रीं गुणिषु प्रमोदं, क्लिष्टेषु जीवेषु कृपापरत्वम्।
माध्यस्थभावं विपरीतवृत्तौ, सदा ममात्मा विदधातु देव॥**

सज्जनों के प्रति मैत्री का भाव , गुणिजनों के प्रति प्रमोद-प्रसन्नता का भाव , दुःखी-असहाय जनों के प्रति कृपा का भाव , दया का भाव और विपरीतबुद्धि वालों के प्रति माध्यस्थता का भाव हो। ऐसे विचार प्रत्येक जीव के प्रत्येक जीव के प्रति होते हैं , तो निश्चित ही प्रत्येक जीव का जीवन प्रसन्न और आनंदित होगा। वे स्वर्ग और मोक्ष के सुखों का आभास यही कर सकते हैं। परन्तु हमारी वैचारिक क्रान्ति हमारे चित्त की निर्मलता को भंग कर देती है , ईर्ष्या, द्वेष, मात्सर्य, घृणा और हिंसा के भाव हमारी श्रेष्ठता का हनन कर देते हैं , जिससे हम सभी जीवों के प्रति मैत्री के भाव को नहीं बना पाते हैं। परन्तु भगवान महावीर स्वामी का यह सिद्धान्त आज भी हमें मैत्री के पाठ को सिखा रहा है। जिससे हम अपने जीवन को बदल सकते हैं।

क्षमा - भगवान महावीर स्वामी ने क्षमा के सूत्र का भी विवेचन किया है और कहा है -

क्षमा वीरस्य भूषणम्।

अति आश्चर्य की बात तो यह कि क्षमा जैसा सिद्धान्त जिसको भगवान महावीर स्वामी ने बहुत अधिक महत्त्व देकर कहा है अति महत्त्वपूर्ण है। क्योंकि क्षमा ही वह बलशाली शस्त्र है , जिससे प्रत्येक बलशाली योद्धा को हराया जा सकता है और उसे अपना मित्र बनाया जा सकता है। भगवान महावीर स्वामी कहते हैं -

खम्मामि सव्व जीवाणं, खम्मंतु सव्वे मे।

मैं सब जीवों को क्षमा करता हूँ, सब जीव मुझे क्षमा करें।

ऐसा भाव जीवन में आना चाहिये। यदि यह भाव जीवन में आता है तो निश्चित ही हमारा जीवन श्रेष्ठ बनेगा। राग , द्वेष से भरा जीवन कभी किसी को हृदय से क्षमा नहीं दे सकता है। यदि क्षमा चाहते हो तो हृदय में सरलता और सहजता के भाव उत्पन्न होना बहुत आवश्यक है।

अपरिग्रह - इस विषय में चर्चा बहुत कम स्थानों पर मिलेगी। संभवतः न भी मिले। परन्तु भगवान महावीर स्वामी ने इस विषय पर बहुत जोर दिया है और कहा है - जितनी ज्यादा वस्तुयें होंगी , उतना ज्यादा दुःख होगा। ऐसे में एक कविता का उल्लेख करता हूँ -

घर में कुत्ते न घुसे, इसलिये पड़ोसी ने दरवाजे पर एक आदमी रख छोड़ा

और घर में आदमी न घुसे इसलिये दूसरे ने दरवाजे पर एक कुत्ता रख छोड़ा

पर मेरे घर में कोई नहीं घुसा,

शायद घुसने वाले ने सोचा होगा, कि ऐसे के घर में भी क्या घुसना ?

जिसके दरवाजे पर न आदमी है और न कुत्ता ।।

कविता बहुत बड़े अर्थ को द्योतित करती है। अपरिग्रहवाद के सिद्धान्त को परिलक्षित करती है। जिसके घर में माल होगा , चोर वहीं आयेंगे और जिसका खाली है रिक्त है उसके घर के दरवाजे भी खुले रहेंगे तो कोई चोर नहीं घुसेगा। पहले हम अपने जीवन को आजीविका से जोड़ते हैं , धन कमाते हैं, धन को सुरक्षित रखते हैं और फिर बाद में धन इसलिये कमाते हैं क्योंकि हमारे द्वारा कमाये हुये धन को कोई छीन न ले , तो उसकी सुरक्षा के लिये धन कमाते हैं। आजीविका जीव की बहुत अच्छी होना चाहिये क्योंकि अच्छी आजीविका वाला ही अच्छा गृहस्थ जीवन जी पायेगा , ठीक धर्माधना और दान आदि कर पायेगा। परन्तु आवश्यकता से अधिक हानिकारक है। कहा भी है -

अति सर्वत्र वर्जयेत्।

जहाँ अति होगी वहाँ निश्चित ही हानि होगी। धन की भी तीन गति बतायी है- दान , भोग, नाश।

जैनदर्शन ने परिग्रह को समझाने के लिये कथन किया है और कहा - दो शब्द है एक आरम्भ और दूसरा परिग्रह। दोनों के अर्थ भी बड़े हैं और दोनों की भूमिका भी जीवन में बहुत बड़ी है। आरम्भ के मायने है किसी वस्तु के प्रति मोह , प्रेम का उत्पन्न हो जाना। जैसे - हमने कोई सुंदर-सा बना हुआ मकान देखा, और सोच बना ली कि मैं भी ऐसा ही मकान बनवाऊँगा , अब उस मकान के विषय में मन में अनेक कौतुहल उत्पन्न किये , और मकान मन ही मन बना भी लिया। पर वास्तविकता में नहीं बना। ऐसे ही हमने अपने में बहुत परिग्रह जोड़ लिया। जितना परिग्रह हमारे घर में नहीं है , उससे कहीं अधिक परिग्रह हमारे मस्तिष्क में बैठा है।

परिग्रह के मायने है - वस्तु को जोड़कर अपने पास रखना , उसकी उपयोगिता और अनुपयोगिता के विषय में चिंतन किये बिना वस्तु को अपने पास बनाये रखना , उससे ममत्व रखना आदि। एक बहुत ही सुंदर उदाहरण इस विषय में परिलक्षित होता है -

घर में बहुत पुराना नौकर था। वह अपने कार्य बहुत अच्छे-से करता था। एक दिन उसके हाथ से एक बहुत कीमती घड़ी टूट गयी। जब मालिक को उसने बताया तो उसको बहुत दुःख हुआ। क्योंकि वह बहुत अधिक वर्षों से उस घड़ी को सुरक्षित रखे। थोड़ा-सा डाँटा। पर मालिक के मन को दुःख हो गया। वह रात भर नहीं सो पाया। सुबह से उठकर उसने सबसे पहले अपने नौकर को बुलाया और कहा - देखो! कितना बुरा संयोग है कि मैंने कल सुबह ही सोचा था , तुम बहुत मेहनत करते हो , हमारी सेवा करते हो , इसलिये तुमको ये घड़ी ईनाम में दूँगे। पर अब तो तुम्हारे हाथ से ये घड़ी टूट गयी है। बस, फिर क्या था ? वह घड़ी मालिक के दिमाग से निकल नौकर के दिमाग में चली जाती है , अब वह नौकर सोच में पड़ जाता है कि काश मैंने सावधानी रखी होती तो वह घड़ी मेरे पास होती है। परन्तु अब वह घड़ी कहीं नहीं है।

बस ऐसे ही परिग्रही की स्थिति होती है , वस्तुयें हमें मिली नहीं है , परन्तु वस्तुओं से जो प्रेम और राग हो जाता है वह हमें दुःखी करता है। इसलिये हमें वस्तुयें से राग और प्रेम न करके अपने आत्मिक गुणों और ईश गुणानुवाद में प्रेम रखना चाहिये।

अपरिग्रहवाद ही एक ऐसा सिद्धान्त है जो देश की बेरोजगारी की समस्या को आसानी से हल कर सकता है। यदि व्यक्ति अपनी आवश्यकता अनुसार वस्तुओं को रखे और उसका उपयोग करें , शेष वस्तुयें अन्य के लिये दे या उनको उपलब्ध कराये तो निश्चित ही देश में बढ़ रही बेरोजगारी समाप्त हो जायेगी। आज सहस्राधिक लोगों ने धन और अन्य वस्तुओं का इतना अधिक संग्रह करके रख लिया है, जिससे आम आदमी धन और वस्तुओं के मोहताज हो रहा है। ऐसे में आवश्यकता है इस सिद्धान्त को अपनाने की और उसका क्रियान्वयन करने की।

उपसंहार - भगवान महावीर स्वामी के सिद्धान्त राष्ट्रनिर्माण , राष्ट्रसंरक्षण-संवर्धन, राष्ट्रगौरव, मानवीय समरसता, जीवमात्र के कल्याण की दृष्टि , समाजहित, जन-जन के हित , आत्मिक आनंद और स्व-पर के कल्याण के लिये अति महत्त्वपूर्ण है। इनका परिपालन प्रत्येक जीवन को श्रेष्ठ , सफल और आनंदित बना सकता है। इनका पालन अत्यंत सरल और सहज है , मात्र आवश्यकता है हमें अपने स्वभाव में आने की। जिस प्रकार से जल को आप गर्म कर दो या ठंडा कर दो , परन्तु गर्म और ठंडे की मियाद खत्म होने के बाद वह शीतल हो जायेगा , अपने स्वभाव में आ जायेगा। ऐसे ही अगर हम भी अपने स्वभाव में आ जाये तो हमारे लिये सब कुछ सरल हो जायेगा। और हमारा स्वभाव जल की तरह शीतल है। न की अहंकार रूपी गर्म और मायाचारी रूपी ठंडा। प्रयास करने से हमारे जीवन में परिवर्तन होगा और आदर्श पुरुष , महान् पुरुष भगवान महावीर स्वामी का इस धरती पर आना सार्थक सिद्ध होगा।

आयतस्तू:

डॉ. आशीष जैन आचार्य शाहगढ़

(राष्ट्रपति सम्मानित)

93290-92390,

aasheishjain@gmail.com